

## हिन्दी उपन्यासों में वर्किंग वीमेंस का विवेचनात्मक अध्ययन

आकांक्षा सिंह

शोधार्थी

पीएच.डी. हिंदी विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली-110007

ईमेल: aakanksha123singh@gmail.com मो.नं. 9873310979

हिन्दी उपन्यास मानव-चरित्रांकन का अन्यतम माध्यम रहा है। मानव जीवन की अनेक घटनाओं का चित्रण उपन्यासकार अपने उपन्यासों में करता है। साहित्य की विविध विधाएं नाटक, कहानी रेखाचित्र आदि विभिन्न घटनाओं को अलग-अलग विषयों में पाठक के समक्ष प्रस्तुत करती हैं जैसे ही उपन्यास विधा भी घटनाओं को पात्रों अथवा चरित्रों के माध्यम से साकार करती है। विश्वनाथ त्रिपाठी लिखते हैं - "साहित्य समाज का दर्पण है।" अर्थात् समाज के बदलते स्वरूप एवं घटनाओं का चित्रांकन करना साहित्यकार का कर्तव्य है।

इस समाज में नारी तथा पुरुष मानव-जीवन के दो प्रधान पक्ष माने गए हैं। मानव समाज रूपी रथ इन्हीं दो पहियों के बल पर अग्रसर होता है। समय का पहिया निरंतर बदलता रहता है उसी के साथ सामाजिक परिवेश और समाज में स्त्री-पुरुष के जीवन में भी स्थित्यंतर हुआ है। प्राचीन काल से वर्तमान तक नारी का जीवन बहुत संघर्षों एवं परिवर्तनों से गुजरा है। पूजनीय देवी से साधारण व्यक्तित्व तक की पहचान का सफर आसान नहीं है। हिन्दी उपन्यासों में नारी को कथानक का केन्द्र बनाकर समय-समय पर उसके विविध पक्षों का उद्घाटन किया गया है। डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी ने स्त्री के बारे में लिखा है "पुरुष निसंग है, स्त्री आसक्त। पुरुष निर्द्वन्द्व है, स्त्री द्वन्द्वोन्मुखी। पुरुष मुक्त है, स्त्री बद्ध।"

समाज का निर्माण जिन व्यक्तियों से होता है, उनका सृजन एवं संस्कार स्त्री द्वारा ही होता है। अतः दूसरे के व्यक्तित्व को विकसित करने वाली स्त्री का अपना व्यक्तित्व विकसित होना अत्यावश्यक है। पुरुष ही हमेशा से धनोपार्जन के लिए घर से बाहर जाते थे महिलाएँ चार-दिवारी के अंदर कैद थीं। बीसवीं शताब्दी में औद्योगीकरण के बाद स्त्री-शिक्षा का प्रसार विशेष तीव्रता से हुआ और कालांतर में समानता का अधिकार। अब वे पुरुषों के कंधे से कंधा मिलाकर चलने लगीं। शिक्षित युवकों ने नई रोशनी में देखा कि नारी घर की दासी नहीं अपितु सहयोगिनी है। कृष्ण बिहारी मिश्र के अनुसार "वर्तमान परिवेश में शादी से बढ़कर नारी आर्थिक सुरक्षा चाहती है, जिससे वह जिंदगी की बिकट से बिकट समस्या पर दो टुक निर्णय ले सके और अपने नीचे एक पक्की जमीन पा सके और अपने स्वाभिमान की रक्षा कर सके।"

प्रेमचन्द के पूर्व हिन्दी-उपन्यासों में नारी के चित्रण में निश्चित आदर्शों के अभाव के कई कारण थे जिसमें प्रमुख थे नारी की आर्थिक पराधीनता और समाज पर रीतिकालीन वातावरण का प्रभाव। प्रेमचन्द के पहले नारी का अपना कोई अलग अस्तित्व ही नहीं था। समाज में उसे उपेक्षित दृष्टि से देखा जाता था। वह सिर्फ लेखकों की दया का पात्र थी। मैथिलीशरण गुप्त लिखते हैं - "अबला जीवन हाथ तेरी यही कहानी आँचल में है दूध और आँखों में पानी।" वहीं आधुनिक काल के कवि जयशंकर प्रसाद ने समाज में स्त्रियों का बोध अपनी रचना 'कामायनी' की इस पंक्ति से कराया है, "नारी तुम केवल श्रद्धा हो, विश्वास रजत नग, पगतल में। पीयूष स्रोत सी बहा करो जीवन के सुंदर समतल में।"

हिन्दी उपन्यास की परम्परा में प्रेमचन्द ने अपने साहित्य में पहली बार नारी के स्वतंत्र, आत्मनिर्भर एवं वास्तविक स्वरूप को चित्रित किया। कल्पना की पॉलिश उन पर है तो लेकिन बहुत कम। उन पात्रों की अपनी मान्यतायें हैं, अपने आदर्श हैं, अपने विचार हैं और अपने दृष्टिकोण हैं। उनके जीवन की समस्त आशा-निराशायें सुख-दुख जैसे हमारी आँखों के

समक्ष मूर्तिमान हो उठते हैं। गोदान की धनिया का व्यक्तित्व तो मानो विद्रोह के ही तानों-बानों से बना हुआ है। अशिक्षित होने के बावजूद स्वाभिमान से भरपूर स्त्री है। विषम सामाजिक रूढ़ियों से धनिया को बड़ी घृणा है। वह झनिया को अपने परिवार में शरण देती है। दातादीन के यह कहने पर कि 'तुम्हें उस दुष्टा को घर में न रखना चाहिए था', धनिया कहती है- "हमको प्रतिष्ठा इतनी प्यारी नहीं है महाराज कि उसके पीछे एक जीव की हत्या कर डालते। व्याहता न सही पर उसकी बाँह तो पकड़ी है मेरे बेटे ने ही। किस मुँह से निकाल देती ? वही काम बड़े-बड़े करते हैं, उनसे कोई कुछ नहीं बोलता, उन्हें कलंक भी नहीं लगता।" वहीं गोदान की पढी-लिखी, नौकरी पेशा वाली मालती का एक चित्र देखिये - "ऊँची एड़ी का जूता पहने हुए हैं और जिनकी मुख छवि पर हँसी फूटी पड़ती है, मिस मालती हैं। आप इंग्लैंड से डॉक्टरी पढ़ कर आयी हैं और अब प्रेक्टिस करती हैं। आप नवयुग की साक्षात् प्रतिमा हैं।"

प्रेमचन्द के बाद हिन्दी उपन्यासों में सबसे अधिक स्त्री मन को खंगालने का कार्य मनोविश्लेषण वादी लेखकों ने किया। जिसमें अज्ञेय, जैनेन्द्र और इलाचंद जोशी आते हैं। अज्ञेय रचित उपन्यास शेखर एक जीवनी में शशि एक स्थान पर शेखर से कहती है "स्त्री हमेशा से अपने को मिटाती आई है। ज्ञान सब उसमें संचित है जैसे धरती में चेतना संचित है पर बीज अंकुरित होता है तो धरती को फोड़कर।" जैनेन्द्र की दृष्टि में नर-नारी की समस्या का समाधान आत्म-लय ही है। जैनेन्द्र की नारी पति की अवहेलना नहीं करती। उसके सम्मुख तो वह इतनी कर्तव्यगत है, इतनी सत्यप्रिय है कि पतिव्रता भी लज्जित हों। फिर भी उसके अन्दर कुछ घुमड़ता है जो उसे समाज से इतर भी प्रकृति के प्रति, विराट के प्रति उन्मुख होने के लिये प्रेरित करता है, उसे जैसे आभास होता है कि समाज इति नहीं है, इसके आगे भी देखना होगा। इस नारी में तो एकदम शुद्ध भारतीय प्राण है। जैनेन्द्र कुमार कहते थे-"मुझे तो लगता है राधा भी अपने जमाने में खूब तिरस्कृता और लांछिता रही होंगी।"

नारी का व्यक्तित्व धीरे-धीरे सबल हो रहा था और अपने अधिकारों को पहचानने की जागरूक भावना ने उसे झकझोर दिया था। नारी ने स्पष्टतः समझ लिया था कि उसकी अवनति एवं पराभव का मूल कारण उसकी आर्थिक पराधीनता है। "अर्थाभाव के कारण जीवन में अवरोध उत्पन्न होने से उसमें घुटन, कुंठा, संत्रास, हीन भावना आदि का वातावरण व्याप्त हो जाता है।"

कामकाजी नारी को आदर्श और कर्तव्य इन दो दिशाओं में से अपना सुख और अधिकार खोजना होता है। पुरुष का विचार होता है कि जिसे वह पत्नी के रूप में अपनाता है वह तन मन से उसकी सेवा करे और हो सके तो धन से भी सेवा-अर्चना करे। हर युग हर परिस्थितियों में स्त्री ने खुद को बदला और समाज की प्रत्येक चुनौती को स्वीकार किया। अगर इस समाज में कुछ नहीं बदला तो वह है पुरुष की रुढ़ मानसिकता। 'कालचक्र' की कल्पना "अपने आप में कुमारेश से किसी तरह भी उन्नीस नहीं अपितु इक्कीस है।" दोनों के विचारों में भिन्नता होने के कारण दांपत्य संबंध में तनाव आ जाता है। इसी कारण से दोनों के संबंध विकृत होते जाते हैं। दोनों एक साथ रहते हुए भी अलगाव का अनुभव करते हैं। 'ज्वार' उपन्यास की सुषमा की स्थिति भी ऐसी ही है।

उसके पति अशोक को परिवार एक झमेला प्रतीत होता है। सुषमा अपने सामर्थ्य से बढ़कर सहनशक्ति से अपनी दोनों भूमिका अदा करती है। परंतु उसका पति स्वार्थी आत्मकेंद्रित है। वह उसकी हर बात को उपेक्षा के भाव से लेता है, उसकी हर बात अशोक को संदर्भहीन लगती है। पुरुष नारी पर अपना अधिकार चला सकता है, अपमान कर सकता है, उसके संबंधियों के आने, रहने के लिए रोक लगा सकता है तो पत्नी भी यही सोचने के लिए क्यों विवश न हो ? आज की नारी ने सुशिक्षित होकर समाज में एक निश्चित स्थान और परिवार में अपना अलग अस्तित्व एवं अस्मिता बनायी है। उसके चिंतन और बौद्धिक क्षमताओं का विकास हुआ है। वह मात्र घर-परिवार में रहकर संतुष्ट नहीं हो पा रही है। वह अपने व्यक्तित्व की सार्थकता की तलाश में घर से बाहर निकलकर अर्थार्जन कर रही है। वह केवल आर्थिक विवशता से नौकरी नहीं कर रही है, इसके साथ अर्थतर कारण भी हैं। अपने परिवार के लिए लड़कियाँ पिता की भूमिका और ज्येष्ठ पुत्र की भी भूमिका निभा रही हैं जिसके चित्र हम पचपन खम्भे लाल दीवारे की सुषमा, मुझे चांद चाहिए की वर्षा के रूप में देख सकते हैं। पति की मृत्यु के बाद या तलाक के बाद किसी के आश्रय में न रहकर अपनी संतान के पालन का दायित्व उसने सहर्ष स्वीकार किया है, जैसे आपका बंटी की शकुन। स्त्री परिवार का जीवन स्तर ऊंचा उठाने के लिए और गृहस्थी की आवश्यकताएं पूरी करने के लिए अपने पति के साथ मिलकर कामकाज की ओर अग्रसर हो रही है, जैसे एक इंच मुस्कान की रंजना।

आज की आधुनिक स्त्रियां दोहरे दायित्वों को अपनाकर जटिल स्थिति को झेल रही हैं। कामकाजी नारी में स्वाभिमान अधिक पाया जाता है। आर्थिक स्वावलंबन अपनाकर पारिवारिक दायित्वों एवं संबंधों से वह मुक्त होना नहीं चाहती है। आर्थिक आवश्यकता न होते हुए भी वह अपनी आत्म सार्थकता की तलाश के लिए अर्जक का कार्य कर रही है जैसे रुकोगी नहीं राधिका की राधिका, उसके हिस्से की धूप की मनीषा। सन साठ के पूर्व के महिला उपन्यासकारों के उपन्यासों में इस प्रकार की प्रवृत्ति अनुपलब्ध है क्योंकि उस समय के समाज में नारियाँ आर्थिक विवशता के कारण ही नौकरी करती थीं। यही चित्र साठोत्तरी उपन्यासों में प्रतिबिंबित होता है।

स्पष्ट है कि आधुनिक नारी समाज के कठोर आघात सहते हुए भी आत्महनन तथा आत्महत्या जैसे हीन कार्य अपना नहीं चाहती। वह आत्मनिर्भर बनकर समाज को चुनौती देने का यत्न करती है। शेषयात्रा में अनु के रूप में एक ऐसी ही नारी का चित्रण हुआ है, जो पति द्वारा त्याग दिये जाने पर टूटती नहीं, बल्कि साहस मेहनत तथा कठोर जीवन संघर्ष से अपनी दारुण स्थिति को बदलकर एक नयी जिंदगी के निर्माण में सफल होती है। आज की नारी अपनी त्रासद स्थिति से उठने के लिए दीर्घ मेहनत और आत्मविश्वास के बलपर आत्मनिर्भर बन सकती है। अपनी जिंदगी स्वयं गढ़ सकती है। अनु मातापिता विहीन है। मामा मामियों के संरक्षण में बड़े ऐशोराम में जीवन बिताती है। उसकी शादी विदेश में रहनेवाले प्रणवकुमार से होती है। विदेश में घर, परिवेश, रहनसहन, खानपान आदि में बड़ी मुश्किल से वह अपने को संभाल पाती है। कुछ ही दिनों में पतिद्वारा त्याग दी जाती है। भारतीय संस्कारों में पत्नी अनु इस आकस्मिक घटना को सह नहीं सकती। परिणाम स्वरूप इस स्थिति को पागलपन का दौरा कहकर मेंटल अस्पताल में भर्ती कराया जाता है अनेक प्रयत्नों के बावजूद पति को पाने में असमर्थ अनु अपनी नयी जिंदगी आरंभ करती है। तलाकशुदा नारी को जो यातनाएं भुगतनी पडती है उन सभी को दृढ़ता से मुकाबला करती हुई वह डॉक्टर बनती है। पति द्वारा की जानेवाली उपेक्षा 'छिन्नमस्ता' की प्रिया को शादी के बाद फिर अर्थार्जन करने के लिए प्रेरित करती है। प्रिया अमीर घराने की बहु है, पति करोड़पति है। विवाह के पहले वह नौकरी करती थी तब उसे नौकरी की आवश्यकता थी।

शादी के बाद वह नौकरी छोड़ती है। परंतु ससुराल का वातावरण ठीक नहीं था। वह एक स्थान पर फिलिप से कहती है कि "सच कहूँ फिलिप, पैसे की कमी नहीं थी। अमीरी की आवरण में छिपे गरीब मन का ओछापन झेलते झेलते मैं थक गई थी हर चीज के लिए पैसा मांगना और फिर हिसाब देना, रोज की झकझक।" 5 इसलिए वह स्वतंत्र व्यवसाय शुरू करती है। वह पति नरेंद्र से कहती है कि "नरेंद्र मैं व्यवसाय रूपये के लिए नहीं कर रही, हाँ चार साल पहले लब मैंने पहले पहल काम शुरू किया था, मुझे रूपयों की जरूरत थी, पर आज मेरा व्यवसाय मेरी आइडेंटिटी है। यह आये दिन की विदेशों की उड़ान ... यह मेरी जिंदगी के कैनवास को बड़ा करती है।" उसे पति से जितने चाहें उतने पैसे मिलते थे। परंतु उसे हिसाब देना पडता था। उसे यह अच्छा नहीं लगता। वह सोचती है कि स्त्री का कोई स्वाभिमान नहीं।

रेत की मछली' की कुंतल पति द्वारा तलाक देने के बाद नौकरी करती है, "उसके पास स्वावलंबी होने के अतिरिक्त और कोई विकल्प नहीं।" पिता के विरोध में उसने प्रेमविवाह किया था। इसलिए पति से तलाक होने के बाद स्वाभिमान की कुंतल पिता के घर न जा सकी। अपने भरण पोषण के लिए उसे नौकरी करनी पडती है।

नौकरी करने के मूल में निस्संदेह आर्थिक कारण होता है, उसके साथ इसमें सामाजिक व मनोवैज्ञानिक कारण भी होते हैं। आर्थिक स्वातंत्रता के लिए नौकरी करनेवाली नारियों के सामने धनाभाव का होना ही आवश्यक नहीं, उनमें निराशा, परिस्थितियों का दबाव, व्यक्तिवादी दृष्टिकोण, असंतोष का भाव आदि भी होते हैं। वे पारिवारिक माहौल में समझौता नहीं कर पाती। अतः अपने ढंग से वे जीना चाहती हैं। इसके लिए आर्थिक स्वातंत्रता अनिवार्य होती है।

सहचारिणी' की नीलम पति के मानसिक शोषण से हताश होकर रवि और रेणु के भरण पोषण के लिए नौकरी करती है। 'खुली हवा' की राधा पति से तंग होकर माता-पिता के पास आती है। वह माता-पिता से सामाजिक संरक्षण चाहती है, और आर्थिक संरक्षण के लिए नौकरी करती है। 'उसका घर' की ऐलमा भाई से तंग आकर नौकरी करने के लिए घर छोड़कर चली जाती है। दमे की बीमारी के कारण पति ने उसे त्याग दिया था। वह आश्रय पाने के लिए भाई के पास आती है। परंतु भाई उसे अपने बाँस को खुश करने का साधन बनाता है। 'सुरंगमा' की सुरंगमा बिना प्यार के ही पलकर बड़ी होती है। पिता शराबी जुआरी था। माँ क्षय रोग से पीड़ित होकर मर जाती है। अकेली सुरंगमा अपने जीविकोपार्जन के लिए बैंक में नौकरी करती है। उसके हिस्से की धूप' की मनीषा पति की अतिव्यस्तता तथा उदासीनता से दुःखी है। वह कहती है- "वैवाहिक जीवन की स्मृतियों को खोद खोद कर निकालने पर भी वह एक क्षण ऐसा ढुंढ नहीं पाती जब औसत पति पत्नी की भांति दोनों ने अनाप-शानाप विषयों पर गपशप की हो।"

प्रायः दिखाई यह देता है कि शिक्षित नारियों में परिस्थितियों का विश्लेषण करने की क्षमता होती है। वह अपने व्यक्तित्व के प्रति सचेत हैं। नारियों के मन में सदियों से पल रहे हीन भाव आज शिक्षा के कारण दूर हो गये हैं। आज बढ़ती शिक्षा, जागृति, आत्मनिर्भरता ने नारी को विचार करने की शक्ति में परिवर्तन कर दिया है। "वह पुरुष को संरक्षक नहीं मित्र अथवा साथी रूप में देखना चाहती है। उसमें पुरुष के समान स्वावलंबी बनने की चाह प्रबल हो गई है।" यही कारण है कि अर्थाभाव न होते हुए भी अर्थार्जन करने की इच्छा नारी स्वातंत्रता की उद्धोषणा कर रही है। आर्थिक रूप से परिवार के किसी सदस्य पर निर्भर रहना वह अपमानजनक मानती है। 'बेघर' की संजीवनी ऐसी ही नारी है जो भाई-भाभी पर निर्भर रहना नहीं चाहती। इसलिए नौकरी करती है। 'आपका बंटी' की शकुन शादी के पहले से नौकरी करती है। विवाह विच्छेद होने के बाद भी नौकरी करती है। आर्थिक स्वातंत्रता ही शकुन

को सही निर्णय ले पाने और जीवन में आगे बढ़ने के लिए प्रेरित करती है। आर्थिक स्वतंत्रता और स्त्री संबंध के बारे में प्रमिला कपूर ने लिखा है कि "नये आर्थिक ढाँचे का विकास दो चरणों में हुआ। पहले चरण में शिक्षित नारी का नौकरी और विवाह के बीच एक को चुनना पड़ा। जिन्होंने नौकरी को चुना उनमें से अधिकांश को विवाह और पारिवारिक जीवन से वंचित रहना पड़ा। दूसरे चरण में केवल नौकरी अथवा विवाह के प्रश्न को छोड़ दिया गया और नौकरी एवं विवाह दोनों की मिली-जुली भूमिकाएँ निभाने का आम प्रचलन हुआ।"

वैवाहिक जीवन पति पत्नी को बांध देता है। परिवार के प्रति अपने कर्तव्यों को पूरा करने के लिए, विवाह कुछ सीमा रेखाएँ दंपतियों के बीच अवश्य खींच देता है जो समाज स्वीकृत है। आज के युग में वैवाहिक जीवन के संदर्भ में भी पुरुष स्त्री के स्वतंत्र विचार व्यक्त होने लगे हैं। वैवाहिक सूत्र में बंधे स्त्री पुरुष के लिए यह आवश्यक है कि वे जो भी कार्य करें एक दूसरे की स्वीकृति से, एक दूसरे के सहयोग से। इस संदर्भ में उसके हिस्से की धूप की मनीषा का विचार बड़ा महत्वपूर्ण बन पड़ता है "यह वैवाहिक जीवन भी बड़ी अजीब चीज है, वह साँच रही थी, जो करो एक साथ, साथ बैठो, साथ बोलो, चाहे बोलने को कुछ हो, चाहे नहीं, साथ घूमो, साथ दोस्त बनाओ, चाहे एक का दोस्त दूसरे को कितना भी नामुराद क्यों न लगे, साथ खाओ और साथ सोओ, चाहे एक के खरटि दूसरे को सारी रात जगाये, और ध्यान न रखे कि वह थका है।"

'अनित्य' की मुकर्जी बाबू ने काजल से इसलिए तलाक ली कि इन दोनों की विचारधाराएँ भिन्न थी। वह तलाक लेकर पुत्र को अपने पास रख लेता है। 'कम्मी और नंदा' की कम्मी पढ़ी लिखी सुशिक्षित नारी है। बचपन में तय हुई शादी मजबूरी में कर लेती है। शादी के बाद उसे मालूम होता है कि पति धोखेबाज, मक्कार है। इससे शादी करने के पहले किसी अन्य लड़की से उसने प्रेम किया था, उसे एक बच्ची भी है, यह समझकर पति और उसकी प्रेमिका की शादी कर देती है और तलाक लेकर फिर नौकरी करने लगती है। वह हताश हो जाती है, तलाक के अतिरिक्त उसके पास अन्य विकल्प नहीं रहा।

**निष्कर्षतः** नॉन वर्किंग नारियों की तुलना में वर्किंग नारियाँ अधिक सुखी है। उन्हें परिवार में निश्चित मान-सम्मान मिला है। वह स्वावलंबी होने के कारण अपने अधिकारों के लिए संघर्ष करती हैं। आलोच्य उपन्यासों का अध्ययन करने से यह स्पष्ट होता है कि वर्किंग वीमेन आधुनिकता और परंपरा दोनों के बीच खड़ी है। वह न पूर्ण रूप से आधुनिकता को अपनाती है, न पूरी तरह परंपरा को नकारती है। इस दुर्बलता से उसे मुक्ति पाना आवश्यक है, तभी उसे जीवन में सुख मिलेगा। हर्ष की बात यह है कि वह पुरुष से अपने अधिकार माँगती हुई उनके प्रति कटु नहीं बन गई है। वह पुरुष के साथ रहकर स्वतंत्रता से जीना चाहती है।

\*\*\*\*\*

#### संदर्भ सूची-

1. डॉ. हेजारी प्रसाद - बाणमट्ट की आत्मकथा, पृष्ठ-110
2. कृष्ण बिहारी मिश्र, आधुनिक आंदोलन और आधुनिक हिंदी साहित्य, पृ. 28
3. प्रेमचंद-गोदान, पृष्ठ 183
4. शेखर : एक जीवनी भाग द्वितीय, पृ० 224
5. साहित्य-संदेश, नारी की कल्पना - श्री ज्ञानचन्द्र, फरवरी 1938
6. बिजलीप्रभा प्रकाश, जैनेंद्र के उपन्यासों के नारी चरित्रों का मनोवैज्ञानिक धरातल, पृ. 97
7. मधु भादुड़ी- कालचक्र, पृ. 109
8. ऊषा प्रियंवदा, उसके हिस्से की धूप, पृ. 61
9. प्रमिला कपूर, भारत में विवाह और कामकाजी महिलाएँ, पृ. 8
10. मृदुला गर्ग, उसके हिस्से की धूप, पृ. 20

## दोहरी जिम्मेदारी का बोझ: भारतीय कामकाजी महिलाओं में कार्य-परिवार संघर्ष का विश्लेषण

डॉ. अंजना सिंह

अतिथि विद्वान -हिंदी विभाग  
प्रधानमंत्री कॉलेजऑफ़ एकसीलेंस

शासकीय राजनारायण स्मृति स्नातकोत्तर महाविद्यालय बैढन, जिला  
-सिंगरौली (म.प्र.)

### शोध सारांश

भारतीय शहरी परिवेश में कार्यरत मध्यम आयु वर्ग की महिलायें अक्सर कार्य-परिवार संघर्ष (WFC) की जटिलताओं में घिरी रहती हैं, जिसे घरेलू अपेक्षाओं और पेशेवर मांगों के बीच के अदृश्य तनाव के रूप में समझा जाता है। पारंपरिक लिंग भूमिकाओं के कारण उत्पन्न होने वाला यह 'दोहरी जिम्मेदारी का बोझ' अक्सर इन महिलाओं के करियर की प्रगति और व्यक्तिगत स्वास्थ्य को नकारात्मक रूप से प्रभावित करता है। यह शोध दो महत्वपूर्ण क्षेत्रों पर मौलिक अंतर्दृष्टि प्रदान करता है: पहला, संघर्ष के उन सूक्ष्म स्रोतों की पहचान करना जो संगठनात्मक नीतियों और पारिवारिक समर्थन की कमी से परे हैं (जैसे, 'माँ' होने की सामाजिक अपेक्षाएँ)। दूसरा, WFC से निपटने के लिए महिलाओं द्वारा उपयोग की जाने वाली जटिल समय-प्रबंधन और सीमा-निर्धारण रणनीतियों का विश्लेषण करना। अंतिम रूप से, यह शोध कार्य-परिवार सुविधा को बढ़ावा देने के लिए कार्यस्थल में लचीलेपन और पारिवारिक भूमिकाओं के पुनर्संरचना की आवश्यकता पर बल देता है, जिससे भारतीय कामकाजी महिलाओं के लिए एक अधिक संधारणीय और समान कार्य-जीवन संतुलन सुनिश्चित किया जा सके।

**मुख्य शब्द (Keywords):** दोहरी जिम्मेदारी, कार्य-परिवार संघर्ष (WFC), सीमा-निर्धारण, लिंग भूमिकाएँ, समय प्रबंधन, भारतीय महिलाएँ।

### शोध विषय की विस्तृत व्याख्या:

#### 1. समस्या का परिचय: आधुनिक कामकाजी महिला

आज की भारतीय कामकाजी महिलाएँ दो विरोधाभासी दुनियाओं के मिलन बिंदु पर खड़ी हैं। एक ओर, भारत की आर्थिक प्रगति और वैश्वीकरण ने महिलाओं के लिए उच्च-स्तरीय पेशेवर करियर के द्वार खोले हैं, जिससे वे राष्ट्र निर्माण और अपने परिवार की आय में महत्वपूर्ण योगदान दे रही हैं। दूसरी ओर, ये पेशेवर उपलब्धियाँ पारंपरिक सामाजिक संरचनाओं और अपरिवर्तित घरेलू अपेक्षाओं के साथ टकराती हैं जिसे कार्य-परिवार संघर्ष (Work-Family Conflict - WFC) के रूप में समझा जाता है। यह संघर्ष केवल समय के बँटवारे तक सीमित नहीं है, बल्कि ऊर्जा, भावनात्मक संसाधनों और व्यक्तिगत पहचान के बँटवारे से भी जुड़ा हुआ है।

#### 2. 'दोहरी जिम्मेदारी का बोझ' की व्याख्या

दोहरी जिम्मेदारी का बोझ एक ऐसी सामाजिक-सांस्कृतिक अवधारणा है जो इस तथ्य को दर्शाती है कि कामकाजी महिलाएँ अपने पेशेवर कर्तव्यों के अलावा, बिना किसी उचित समर्थन के, प्राथमिक रूप से घरेलू कार्यों और बाल-देखभाल की जिम्मेदारी भी उठाती हैं। भारतीय संदर्भ में, यह बोझ पितृसत्तात्मक मानदंडों और लिंग-आधारित भूमिकाओं से गहराई से जुड़ा हुआ है, जहाँ घर का काम मुख्य रूप से 'स्त्री का काम' माना जाता है।

कार्य-परिवार संघर्ष तब उत्पन्न होता है जब एक भूमिका (पेशेवर या पारिवारिक) की माँगें दूसरी भूमिका की माँगों को पूरा करना कठिन बना देती हैं। यह संघर्ष मुख्यतः दो दिशाओं में होता है: